मुस्लिम महिलाओं के हक में

सर्वोच्च न्यायालय की पांच सदस्यीय पीठ ने बहुमत से देश की मुस्लिम समाज की महिलाओं के हक में फैसला देते हुए एक साथ तीन बार तलाक कहने की प्रथा को अवैध और असांविधानिक करार दिया है और छह महीने तक के लिए इस पर प्रतिबंध लगा दिया है। साथ ही अदालत ने केंद्र सरकार को यह निर्देश दिया है कि वह इन छह महीनों के दौरान मुस्लिम समाज में विवाह और तलाक प्रथा के संचालन के लिए कानून बनाए, जिसमें मुस्लिम पर्सनल लॉ का खयाल रखा जाए। शीर्ष न्यायालय का यह फैसला न केवल मुस्लिम समाज की आधी आबादी को मानसिक और शारीरिक शोषण से बचाएगा, बल्कि उन्हें लैंगिक बराबरी और सम्मान भी दिलाएगा। शीर्ष अदालत का यह फैसला प्रगतिशील एवं स्वागतयोग्य है।

कुरान में कहीं भी एक साथ तीन तलाक की व्यवस्था कायम नहीं की गई है। इस्लाम जुल्म, नाइंसाफी और शोषण के खिलाफ है। पैगंबर मोहम्मद साहब ने एक साथ तीन तलाक को अबगजुल हलाल यानी खुदा की नजर में सबसे बुरी चीज कहा था। एक बार एक व्यक्ति ने उनसे कहा कि उसने अपनी पत्नी को गुस्से में एक साथ ही तीन बार तलाक कह दिया है, तो पैगंबर ने उसे बताया कि इसे एक बार तलाक ही माना जाएगा। *कुरान* में तलाक की जो व्यवस्था है, उसमें तीन बार तलाक कहे जाने के बीच एक-एक महीने का अंतराल दिया गया है, ताकि अगर तलाक देने वाला पुरुष अपने फैसले पर पुनर्विचार करना चाहे, तो ऐसा कर सके। तीसरे महीने में उसके पास दो बार पूर्व में बोले गए तलाक को वापस लेने या तीसरी बार तलाक बोलकर तलाक को अंतिम रूप देने का विकल्प होता है। लेकिन तीसरे महीने में तलाक बोलने पर फैसला बदल नहीं सकता। असल में *कुरान* में सुझाई गई इस व्यवस्था में लोगों के पास ठंडे दिमाग से सोचकर फैसला लेने का विकल्प होता है। एक साथ तीन तलाक की प्रथा में ऐसा नहीं होता, इसलिए इसका मुस्लिम महिलाओं पर बहुत बुरा असर पड़ता है और यह उनके शोषण का हथियार बन गया है।



सर्वोच्च न्यायालय का यह ऐतिहासिक फैसला देश की मुस्लिम महिलाओं की जीत है। उम्मीद करनी चाहिए कि इस प्रथा के खात्मे से मुस्लिम महिलाओं के साथ होने वाली नाइंसाफी खत्म होगी।



फरीदा खानम

असल में इस प्रथा की शुरुआत हजरत उमर (दूसरे खलीफा) के जमाने में शुरू हुई। उस वक्त समाज में थोड़ी समृद्धि आ गई थी और मुस्लिम महिलाओं पर पुरुषों का अत्याचार बढ़ने लगा था। महिलाओं पर अत्याचार करने वाले पुरुषों को दंडित करने के लिए कुछ मामलों में अपवादस्वरूप हजरत उमर ने एक साथ तीन तलाक की व्यवस्था देकर पीड़ित महिलाओं को वैसे पुरुषों से अलग कराया था। अब विडंबना देखिए कि जो प्रथा महिलाओं को सताने वाले पुरुषों को दंड देने के लिए और महिलाओं को ऐसे पुरुषों से निजात दिलाने के लिए शुरू की गई, उसे बाद में कानून का रूप दे दिया गया और उसका इस्तेमाल महिलाओं के खिलाफ ही होने लगा। अब्बासी साम्राज्य में फोकहा (न्यायविद) हनफी होते थे। इमाम अबु हनीफा ने ही एक साथ तीन तलाक की प्रथा को कानून का रूप दे दिया और यह तबसे प्रचलन में आ गया। भारत में ज्यादातर मुसलमान हनफी विचारधारा को मानने वाले हैं, इसलिए वे एक साथ तीन तलाक की प्रथा को मानते हैं। लेकिन एक साथ तीन तलाक की प्रथा का समर्थन करने वाले लोगों को समझना चाहिए कि किसी खलीफा के कार्यकारी आदेश को कानून का दर्जा नहीं दिया जा सकता और वह *कुरान* के कानून को नहीं बदल सकता।

बीते कुछ समय से एक साथ तीन तलाक देने की प्रथा को लेकर देश भर में काफी हलचल रही है। कई मुस्लिम महिलाओं ने इस प्रथा के खिलाफ शीर्ष अदालत का दरवाजा खटखटाया था। उन्हीं मामलों पर विचार करने के बाद शीर्ष अदालत ने यह फैसला सुनाया है। इसके खिलाफ याचिका दायर करने वाली मुस्लिम महिलाएं और समाज का एक तबका जहां इसे संविधान प्रदत्त बराबरी के अधिकार के खिलाफ मानता है, वहीं ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड का रुख ठीक इसके उलट था। याचिकाकर्ताओं का तर्क था कि एक साथ तीन तलाक जरूरी धार्मिक रिवाज नहीं है और इसके चलते मुस्लिम महिलाओं पर अत्याचार होता है, वहीं मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड का कहना था कि यह एक मजहबी मसला है, जिसमें सुप्रीम कोर्ट को दखल नहीं देना चाहिए। उनका यह भी तर्क था कि एक साथ तीन तलाक की प्रथा सैकड़ों वर्षों से प्रचलित है, पर सवाल उठता है कि क्या अगर कोई बुराई समाज से सैकड़ों वर्षों से प्रचलित है, तो उसे इसी आधार पर कायम रहने देना चाहिए।

शीर्ष अदालत ने अपने फैसले में इस्लामिक देशों में एक साथ तीन तलाक पर लगे प्रतिबंधों का हवाला देते हुए कहा कि स्वतंत्र भारत में इस पर रोक क्यों नहीं लगनी चाहिए, जो धर्म का हिस्सा नहीं है। अदालत ने इसे तुरंत खत्म करने की बात कहते हुए सरकार को छह महीने के भीतर कानून बनाने के लिए कहा है। अगर सरकार इस अवधि के दौरान इस कानून का मसौदा सामने लाती है, तो कानून बनने तक एक साथ तीन तलाक की प्रथा पर रोक जारी रहेगी और अगर सरकार ने एक साथ तीन तलाक की प्रथा को वैध माना, तो इस पर से रोक हट जाएगी। लेकिन सरकार का रुख भी इस अमानवीय प्रथा को खत्म करने का ही है, क्योंकि मामले की सुनवाई के दौरान सरकार ने शीर्ष अदालत में कहा था कि अगर अदालत द्वारा इस प्रथा को अवैध और असांविधानिक घोषित कर दिया जाता है, तो वह मुस्लिमों के विवाह, तलाक आदि की व्यवस्था संचालित करने के लिए कानून बनाएगी। अदालत का निर्देश सरकार के इसी आश्वासन के अनुकूल है।

सर्वोच्च न्यायालय का यह ऐतिहासिक फैसला देश की मुस्लिम महिलाओं की जीत है। उम्मीद करनी चाहिए कि इस प्रथा के खात्मे से मुस्लिम महिलाओं के साथ होने वाली नाइंसाफी खत्म होगी। सरकार को जल्द से जल्द सुप्रीम कोर्ट के फैसले के अनुरूप ऐसा कानून बनाना चाहिए, जो मुस्लिम समाज, खासकर महिलाओं को खुशहाली का रास्ता दे तथा मुस्लिम महिलाओं को लैंगिक बराबरी का दर्जा हासिल हो सके।

जामिया मिल्लिया इस्लामिया विवि में इस्लामिक स्टडीज की प्रोफेसर